International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 5; September 2016; Page No. 68-70

हकीकत को कुरेदती कहानियाँ

(सुश्री उमाकांत खुबालकर जी की कहानी संग्रह "व्यतिक्रम" एक अद्धय यन)

डॉ. रंजित, डॉ. सूर्या बोस

एम. ई. एस. अस्माबी कोलेज पि. वेम्बलूर पी. ओ कोडूगलूर, त्रिश्शूर जिला केरल, भारत।

प्रस्तावना

भारत वर्ष में लाखों हजारौं वर्षों में एक विशेष संस्कृति फली फूली है और बढ़ी है। इसने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में एक सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया है. बाजार और सेक्स के समन्वय से जो अर्थशास्त्र बनता है उसने सारे नैतिक मूल्यों को पीछे छोड़ दिया है। मनुष्य बाजारू संस्कृति का खिलौना मात्र बनकर रह गया है। जो कि शरीर कम ढंकने, उघाड़ने या ओढ़ने पर जोर देता है आज मानव रोज बाजारवाद का इतना गुलाम हो गया है कि उसकी सारी आवश्यकताएं बाजार निश्चित" करता है । इसका असर आम जनता में ही नहीं सरकारी दफ्तरों में भी दर्शनीय है. खुब्लाकर जी द्वारा विरचित 'चक्रवात 'नामक कहानी इसका मिसाल है.

बाजारू संस्कृति कैसे हमारे कोमल भावनों को कुचल कर आगे बढ़ रहे है इसका वर्णन इस कहानी में हुआ है. कार्यालयों में नारी पर हो रहे अत्याचारों का खुलासा चित्रण "चक्रवात "में हुआ है. अपनी नारीत्व को भी मिटाकर तरक्की की कामना करनेवाले या तरक्की प्राप्त करती नारियों के मनस्थिति क्या होती है इसके बारे में हम नहीं सोचते थे. अपने घरवाले या पति को नीचा दिखाने के लिए और खुद कमानेवाली बनने की लालच में निर्लज्ज औरतें क्या नहीं करती इसका निर्भीक वर्णन 'चक्रवात' कहानी में है. आधुनिक नारी को कैसा होना चाहिए रू इसका मिसाल है त्रिखा. स्वत्व की रक्षा करना सभी को आना चाहिए रूतभी आत्म सम्मान बना रहता है. आत्म सामान की रक्षा एक सशक्त महिला की तरह त्रिखा करती है उसके करतूत देखने लायक ही है. साथ ही लड़कियों और महिलाओं को अपनी आबरू की रक्षा का मार्ग भी सिखाती है. इस कहानी में, प्रतिरोध है। स्त्री के लिए,उसके रिएक्शन के लिए एक दिशा है।वह रोजमर्रा की समस्याओं का सामना कैसे करे।समाज में प्रचलित मान्यताओं के तहत वह बहुत कुछ है जो सहन करती है। पर लेखक इस सहनकर्म से अपनी असहमति व्यक्त करता हैं।

'जिंदगियां ऐसी भी होती है' की आनंदिता सीधी सादी घरवाली थी. अपनी पति की मृत्यु ससुरवालों की लापरवाही से हुयी है रूइसी एक बात पर वह सशक्त बन जाती है. हडपने की देवर की चाल को वह रोक लेती है और लोक लाज की चिंता किये बिना अपने बच्चों के भविष्य के लिए दृढ़ खडा हो जाती है. दुनिया में लोक–लाज और संस्कारों के नाम पर स्त्री के शोषण के प्रतिरोध को आवाज नहीं देने दिया है।स्त्री अपने ऊपर हो रहे अत्याचार को चुपचाप सहने के लिए बाध्य की जाती रही है. स्त्री लोक–लाज के भय से अब तक पुरुष का शोषण सहन करती आई है। पुरुष ने जिस स्त्री को निर्मित किया था वह अब तक चुप रहती थी।लेकिन लेखक इस निर्मित स्त्री की छवि को तोड़ता हैं और नई स्त्री बनाती हैं। यह स्त्री का सशक्तिकरण है।वह विरोध करना सीख जाती है। विरोध करने लगती है।इस कहानी में भी खुद को सशक्त बनानेवाली नारी का रूप हमें मिल रहे है. नारी सशक्तीकरण के लिए हजारें योजनायें हम बना रहे है. मगर समाज में नारी का स्थान घट रही है. इसका मूल कारण तो यह है कि समाज में नारी का गलत रूप का ही चित्रण ज्यादा हो रहे है. जितनी भी साहित्यिक रचनाएं है उसमें नारी सिर्फ भोग का उपकरण मात्र है. खुबालकर जी उस हालत से नारी को बचाने की कोशिश कर रहे है,जो सराहनीय भी है. नारी को हवस पूर्ति का साधन न मानते हुए उसे हमारे समाज का एक मजबूत कड़ी, समाज का एक अभिन्न एवं महत्वपूर्ण हिस्सा मानना होगा। खुबालकर जी इस कहानी के माद्धयम से बता रहे है कि कहानीकार व साहित्यकार महिलाओं के सम्मान को प्राथमिकता दें बजाए इसके कि गंदे व अश्लील साहित्य केवल धन अर्जित करने के लिए बाजार में परोसे जाएं और इसे व्यवसायिक मांग बताकर न्यायोचित ठहराने की कोशिश की जाए महानगरीय घरों के काम काजी पति दृपत्नी का रहन सहन तथा सामाजिक कार्यक्रमों के घोघलेपन आदि का चित्रण 'व्यतिक्रम' में हुआ है. महानगरों में कानून है मगर उसका नियंत्रक पुलीस वगैरह नहीं और कोई कर रहे है. पुलीसवालों के सामने से ही गलत काम करे तो भी वे उन लोगों को देखता ही नहीं.रेलवे में तो दलालों का खेल है.अपनी तनख्वाह के अलावा रेलवे के कर्मचारी दलालों से भी रुपया वसूल करते है और इसका असर तो आम लोगों को भोगना पड रहे है. अब महानगरीय आपाधापी में भले ही बड़े शहरों में समाज के सभी तबकों और सभी संबंधियों से सहयोग लेने और देने की भावना कम हो गई है. सब यंत्र जैसा जीवन बिता रहे है. इसलिए ही उनके बीच रिश्ता नहीं है. आज का व्यक्ति सिर्फ अपनी जिंदगी जी रहा है, उसे दूसरे की जिंदगी में झांकना दखलअंदाजी लगता है। वह सारी दुनिया की खबर इंटरनेट से रख रहा है पर पड़ोसी का क्या हाल है? उसे नहीं पता। परिवारों की टूटन ने रिश्तों की डोरी को कमजोर कर दिया है। आज का व्यक्ति आत्मनिर्भर होते ही अपना एक अलग घर बनाने की सोचता है।

लड़का और लड़की विभिन्न अस्तित्ववाले होंगे.शादी के बाद उनको एक साथ रहना पडेगा.तब थोड़ा बहुत बदलाव अपने काम काज में करना पडेगा.लेकिन आज न जाने क्यों इसके बारे में कोई सिखाता ही नहीं और इसलिए ही घर लड़ाई का केंद्र बनते जा रहे है. परिवारवाले भी दोनों को समझाने का नहीं समस्या और बढाने की काम कर रहे है. 'पुर्वायी' नामक कहानी में पति दृपत्नी संबंध के बीच उनके परिवार का हस्ताक्षेप किस तरह उलटा साबित हो सकता है दिखाया है. घर में पत्नी से जो अन्तरंग प्यार प्राप्त नहीं होता तो प्रोफसर विश्वनाथ अपने विद्यार्थिनियों से वह प्राप्त करने की कोशिश करता है. सामाजिक मर्यादा की दृष्टि से यह कहानी अनुकरणीय नहीं है. फिर भी प्रार्थना नामक लडकी की दृष्टी से देखा जाए तो उस अकेली लड़की को जीने का एक सम्बल मिल रहा है. कहानी हर पल आगे क्या होगा की जिज्ञासा पैदा करता है. आज जब एकल परिवार हमारी मजबूरी बन गया है, ऐसे में हमारी स्वस्थ परम्पराओं का अगली पीढ़ी को पारेषण एक समस्या बन गई है। 'प्यार' शब्द की परिभाषा हर किसी ने अपने अनुसार गढ़ी है। पर यह शब्द अपनी पवित्रता खोता जा रहा है। अगर आप किसी से ऐसा कहोगे तो वो बोलेगा कि समय के अनुसार हर चीज बदल

जाती है। पर मैं कहूंगा जहां पवित्रता नहीं वहां प्यार नहीं। चाहे वो माँ–बेटे का प्यार हो या भाई–बहन का, पिता–बेटी का प्यार हो या गुरू– शिष्य का, या फिर प्रेमी–प्रेमिका का सब कुछ होने पर भी मन की तसल्ली नहीं है तो जीना हराम हो जाएगा इसका सबूत है 'पडाव' कहानी पति दृपत्नी के बीच झगड़ा होता है तो बच्चों को ही बड़ा सदमा लगता है रूऊपर से प्रतिशोध के लिए बच्चे को भूखा रखना, मारना पीटना आदि एक निर्दयी माँ ही कर सकती है. नारी की प्रतिछाया को उल्ट फेर कर देनेवाली एक सशक्त कहानी है 'पड़ाव'. सेठ मोतीसागर जैसे नागरिक अब कम हो रहे है जो समाज केलिए कुछ करने में मन लगाते है. अपने माँ को बहुत सालों के बाद देखने को जानेवाले मोतीसागर उनसे मिलने के पहले ही चल गुसरते है. यह घटना दिल को छूनेवाला ही है.बुढापे में लोग कितना अकेलापन सह रहे है इसका झलक भी इस कहानी में चित्रित किया है. बूढों की समस्या जैसे आज की ज्वलंत समस्य हो चुकी है, इसकी और चिंता करने की प्रेरणा इस कहानी हमें दे रहे है. एक समय था जब लोग समूह में और परिवार में रहना पसंद करते थे। जिसका जितना बड़ा परिवार होता वो उतना ही संपन्न और सौभाग्यशाली माना जाता था और जिस परिवार में मेल मिलाप होता था और सम्पन्नता होती थी उसके पूरे क्षेत्र में प्रतिष्ठा रहती थी। यह ऐसा समय था जब समाज में परिवारों का बोलबाला था और समाज में सम्पन्नता की निशानी परिवार की प्रतिष्ठा से लगाई जाती थी। उस दौर में व्यक्ति की प्रधानता नहीं थी बल्कि परिवारों की प्रधानता थी।लेकिन बदलते दौर और समय ने इस सारी व्यवस्था को बदल कर रख दिया है। अब वह दौर नहीं रहा। आज परिवार छोटे हो गए हैं और सब लोग 'स्व 'में केंन्द्रित होकर जी रहे हैं. पहले व्यक्ति पूरे परिवार के लिए जीता था पर आज अपने बीबी बच्चों के लिए जीता है। उसे अपने बच्चों और अपनी बीबी के अलावा किसी और का सुख और दुख नजर नहीं आता है. वह अपनी पूरी जिंदगी सिर्फ इसी अधेड़बुन में लगा देता है कि कैसे अपने बच्चों को ज्यादा से ज्यादा सुविधाएँ दे दूं और कैसे अपने आप को समाज में प्रतिष्ठित बना सकूं।

'लडकियां नहीं चीखती है 'इस संग्रह की सबसे छोटी कहानी होने के बावजूद सबसे हृदयविदारक है. समाज में आगे बढ़ने केलिए एक असहाय लड़की को अपन मन के विरुद्ध क्या क्या करना पड़ता है. ऐसी दयनीय स्थिति का क्या कारण हो सकता है? भूख जिन्दगी का कडुआ सच है. आश्रयहीन के लिए आगे बढना कितना कठिन है इसका मिसाल है तृप्ता नामक लड़की की जिन्दगी. कहानी मन को छु लेता ही नहीं मरोड़ लेती है. नारी न तो खुबसुरत खिलौना है न ही उसका शरीर उपभोग की वस्तु।वह एक खुबसुरत बचपन है, एक बेटी है, एक बहन है,एक जीवन साथी है, एक बहु है, एक मॉ है,और बुढी दादी नानी है। सृष्टि की वह महत्वपूर्ण कड़ी है स्त्री जिसके कोंख से भविष्य जन्म लेता है और पलता है. नारी उत्पीडन या महिलाओं से की जाने वाली छेड़छाड़ के विषय पर पुरुषों को ही गलत मानना सही नहीं है. बचपन से ही पारिवारिक स्तर पर अच्छे संस्कार दिए जाने व महिलाओं के प्रति सम्मान व आदर का भाव रखने की शिक्षा देनी चाहिए. महिलाओं के साथ बेवजह छेड़छाड़ करने वालों व उन्हें अपमानित व पीडि◌ित करने वालों के साथ भी सख्ती से पेश आने की आवश्यकता है।

'लडकियां नहीं चीखती है 'इस संग्रह की सबसे छोटी कहानी होने के बावजूद सबसे हृदयविदारक है. समाज में आगे बढ़ने केलिए एक असहाय लड़की को अपन मन के विरुद्ध क्या क्या करना पड़ता है. ऐसी दयनीय स्थिति का क्या कारण हो सकता है? भूख जिन्दगी का कडुआ सच है. आश्रयहीन के लिए आगे बढना कितना कठिन है इसका मिसाल है तृप्ता नामक लड़की की जिन्दगी कहानी मन को छु लेता ही नहीं मरोड़ लेती है. नारी न तो खुबसुरत खिलौना है न ही उसका शरीर उपभोग की वस्तु। वह एक खुबसुरत बचपन है, एक बेटी है, एक बहन है, एक जीवन साथी है, एक बहु है, एक मॉ है, और बुढी दादी नानी है। सृष्टि की वह महत्वपूर्ण कड़ी है स्त्री जिसके कोंख से भविष्य जन्म लेता है और पलता है. नारी उत्पीडन या महिलाओं से की जाने वाली छेड़छाड़ के विषय पर पुरुषों को ही गलत मानना सही नहीं है. बचपन से ही पारिवारिक स्तर पर अच्छे संस्कार दिए जाने व महिलाओं के प्रति सम्मान व आदर का भाव रखने की शिक्षा देनी चाहिए. महिलाओं के साथ बेवजह छेड़छाड़ करने वालों व उन्हें अपमानित व पीडि◌ित करने वालों के साथ भी सख्ती से पेश आने की आवश्यकता है।

साहित्य में कई धाराओं या विचारों का समावेश होता है. एक पाठक के लिए साहित्य, समाज में व्याप्त अच्छे व बुरे गतिविधियों या चलन को जानने व समझने का माध्यम होता है. पाठक किसी भी लेखक व रचनाकार की दृष्टि को अपनी दृष्टि से जांचता व परखता है, यही उस साहित्य की सफलता व असफलता का पैमाना होता है. आज साहित्य भी धनार्जन का एक माद्धयम के रूप में सिकुड़ रहा है. जाने माने लेखक बनने के बाद भी लोग धन पिपासु ही रह जाते है. कुछ संस्थाएं तो साहित्य चर्चा के बहाने सम्मेलन चलाकर लोगों को धोखा दे रहे है.सम्मेलन में बुलानेवाले और बैठनेवाले एक मत से खाने के बारे में ही बातें करते है और मंच पर क्या हो रहे इसकी और ध्यान देता ही नहीं. वे इसलिए सुनने जाते हैं जिससे उन्हें सेमीनार में भाग लेने का सर्टीफिकेट मिल जाए। यह साहित्य के चरम पतन की सूचना है। ये वे लोग हैं जो हिन्दी साहित्य से रोटी–रोजी कमा रहे हैं। ये लोग सेमीनार में बोले बिना सेमीनार में भाग लेने का प्रमाणपत्र पाकर अपने को धन्य कर रहे हैं। आज वास्तविकता यह है कि ज्यादातर लेखक और समीक्षक आजीविका और थोथी प्रशंसा पाने के लिए अपने पेशे में हैं।वे किसी भी चीज को लेकर बेचौन नहीं होते। उनके अंदर कोई सवाल पैदा नहीं होते। एक नागरिक के नाते उनके अंदर वर्तमान की विभीषिकाओं को देखकर उन्हें गहराई में जाकर जानने की इच्छा पैदा नहीं होती। वे पूरी तरह अतीत के रेतीले टीले में सिर गडाए बैठे हैं। भारतीय साहित्य व समाज में मुख्यधारा नामक तत्व की मौजूदगी एक महत्वपूर्ण प्रश्न बनकर उभरी है. आखिर यह मुख्यधारा है क्या ? सूक्ष्म स्तर पर मुख्यधारा को देखने से कुछ तथ्य सामने आते हैं, मसलन मुख्यधारा पूर्णतः एक वर्ग विशेष की नैसर्गिक आंतरिक गुण का प्रतिबिंब होता है, जिसमें स्व के राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक पहलू की भावना ही सर्वोपरि होती है. साथ ही इसमें स्त्री देह, नस्लीय भावना और तानाशाही प्रमुख उपकरण के तौर पर बराबर इस्तेमाल में लाये जाते हैं. यहां ध्यान देने वाली बात यह है कि वह वर्ग विशेष दोनों जगहों पर एक ही रुप में मौजूद रहता है। इन सब के बारे में 'तमाशा 'नामक कहानी में बताया गया है.

अमंगल नामक कहानी में नमिता के माद्धयम से कई गहन विषयों पर चर्चा की गयी है.

कुछ लोगों को अमंगल लगनेवाले कई बातों का जिक्र खुलकर लेखक ने यहाँ किया है. कुछ लोग कहेंगे यह हमारे परमपरा के अनुरूप कहानी नहीं है. लेकिन परंपरा को इकहरे,एकरेखीय क्रम में नहीं पढ़ा जाना चाहिए। परंपरा का समग्रता में जटिलता के साथ मूल्यांकन किया जाना चाहिए। हमारे देश को जहां कभी चारित्रिक शुद्धता बनाए रखने पर जोर दिया जाता था. परिवारों के बड़े बूढ़े घर की चार दीवारी में पलतीं अपनी संतानों को शिशुत्व से लेकर पूर्ण यौवन तक संभाले रखने के प्रयास में धार्मिक, संस्कृतिक और सामाजिक मर्यादाओं में बांधे रख कर संयत संतुलित जीवन जीने के लिए प्रेरित करते थे.आज वह हाल बदल चुके है. पारिवारिक संस्कारों को नकारते, खुली यौनिकता के पक्षधर बने, व्यक्ति स्वातंर्त्य की हामी भरते हैं. किसी प्रकार के मर्यादाबंधन को मान्यता नहीं देते. उन्हें आधुनिकता के उस बेपर्दा रूपदर्शन में सुख मिलता है जो खुल खेलने का आमन्त्रण देता है. अपनी मनचाही करने के हर नर

नारी के अधिकार की दुहाई देते हैं. उसके लिए मानवाधिकारों का रक्षा कवच भी उपलब्ध कर देते हैं.

पुरुष को स्त्री से 'ना' सुनना किसी भी रिश्ते में या बिना रिश्ते के भी पसन्द नहीं आता, अतः किसी लड़के ने किसी लड़की से दोस्ती या प्रेम का हाथ बढ़ाया और लड़की ने 'ना' कह दिया तो उसका आत्म सम्मान ऐसे चटकता है कि वो कभी लड़की पर तेजाब फेंक देता है, कभी दुराचार करता है या कत्ल कर देता है, या ऐसी कोशिश करता है.नमिता को अपने दोस्त से इस प्रकार का व्यवहार सहनी पड़ती है. इस पृथ्वी पर जीवन और सृष्टि का सुचारू रूप से संचालन करती है. इसके लिये उसकी अपनी व्यवस्थाएं हैं. उसी में एक है मैथुन क्रिया, मनुष्य ही नहीं, सृष्टि के प्रत्येक जीव को जीवन उत्पत्ति के परम्परागत निर्वहन के लिये इसकी जरूरत पड़ती है. लेकिन प्राकृतिक भोग की बजाय अप्राकृतिक अतिभोग से क्षणिक आनन्द की प्राप्ति तो हो जाती है, लेकिन आत्मसंतुष्टि नहीं मिलती. समलैंगिकता की बात खुले ढंग से कहने में लेखक हिचकता ही नहीं. समलैगिंकता जिस तेजी से हमारे साफ सुथरे समाज में दाखिल और हावी हुई है यह विचारणीय और गम्भीर मुद्दा बन गया है. समलैगिंक जोडे के लिये प्यार का अहसास भी अलग होता है और यौन संतुष्टि की परिभाषा भी अलग है। समलिंगी साथी के आकर्षण का सामीप्य ही उन्हें चरम सुख प्रदान करता है तभी तो चढ़ती उम्र में वह एक ऐसी हमराही की तलाश करते हैं जो तलाश उन्हें आम आदमी से कुछ अलग करती है अक्सर लेखक ऐसी बातों से दूर रहना चाहता है,मगर यहाँ लेखक उसके बारे में सूचना तो दिया है जो सराहनीय है.

बाजार, तकनीकी और नैतिक मूल्यों का सामंजस्य ही वर्तमान समय की दरकार है. यह हम सबको मिलकर सोचना होगा। अपने काल विशेष की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक परिस्थितियों से हिंदी लेखन में स्वतरूस्फूर्त, गतिशील विचारधारा का हमेशा प्रभाव रहा है। आज भारतीय समाज और संस्कृति को समझने की विश्वदृष्टि विखंडित होकर संप्रदायगत, दलगत और समुदायगत हितों में बदल चुकी हैं। इसने जिस मजहबी कट्टरता, जातिवादी विभाजन और दिशाहीन राजनीति को जन्म दिया है, उसका नतीजा पूरा देश भोग रहा है। इन सवालों पर अलग से विचार करने की जरूरत है। आज जरूरत है औपचारिकताओ को मिटाकर दिमाग के दरवाजे खोलने की ताकि आपके दिल में सारा परिवार समा जाए और पूरा मुहल्ला आ जाए और आपको लगे कि यह शहर मेरा है, यह परिवार मेरा है, यह मुहल्ला मेरा है। हम अपने संस्कारों को न भूले, अपनी परम्पराओं को न भूलें। याद रखे विकास करना बुरी बात नहीं है पर विकास के साथ परम्पराओं को भूलना नासमझी है।